Project Report

"Safeguarding the Intangible Cultural Heritage and Diverse Cultural Traditions of India"

Submitted to:

Sangeet Natak Akademy, Ravindra Bhawan, Feroz Shah Road, New Delhi

Submitted by: Bundeli Lok Nritya Natya Kala Parishad, Kanera Dev, Sagar

भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत एवं परम्पराओं के संरक्षण की योजना के अनुदान के अंतर्गत अनुसंधान के ऊपर श्रेष्ठ विद्वानों के मार्गदर्शन में संस्था ने लोक नृत्य राई के ऊपर कार्य प्रारंभ किया, इसमें सर्व प्रथम सभी श्रेष्ठ विद्वानों को आमंत्रित किया गया, जिन्होंने अपने अलग-अलग विचार विमर्श रखे

भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत एवं परम्पराओं के संरक्षण की योजना के अंतर्गत हमारी संस्था ने अपने विषय बुंदेलखंड अंचल के प्राचीन लोक नृत्य राई के ऊपर अपनी कार्य योजना आज दिनांक 01 जनवरी 2015 को प्रारंभ की। इस योजना के अंतर्गत हमारी संस्था ने सर्व प्रथम एक बैठक का आयोजन किया गया, यह बैठक ग्राम कनेरा देव में आयोजित की गयी, जिसमे इस कला के विशेषज्ञों एवं लोक कलाकरों को आमंत्रित किया गया। जिसमे सभी विद्वानों ने अपने अपने विचारों को रखा जिसमे सर्व प्रथम विशेषज्ञ के रूप में डॉ. हरी सिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय के K.K. Krishna Rao ने अपने उद्बोधन में कहा की लोक नृत्य राई का इतिहास बहुत पुराना है, यह हमे बताता है की वैदिक युग से लेकर पौराणिक युग तक एक निश्चित कथा लोक में प्रवाहमान रही है। इतिहास काल में इस कथा के साथ साथ अन्य कथायें भी जुड़ती गयीं है, ये मध्य काल में धार्मिक परिप्येक्ष को प्रस्तुत करती है, तो उत्तर मध्य काल तक आते आते इसका स्वरुप बदल जाता है। मुग़लों के काल में राई की प्रतियोगिता मुजरा से हुई, जिसमे धार्मिकता का पक्ष प्रायः कम ही रहा है, इसीलिए रियासतों और जनपदों के माध्यम से राई नृत्य केवल मनोरंजन तक ही सीमित रहा है, भले ही उसमे सुमरनी, गुरु शिष्य सम्बन्ध से समन्वयवित्र संगीत और नृत्य पारंपरिक रूप में अपनाये जाते रहे है। कभी कभी तो इसका ऐसा व्यवसायीकरण हो गया है की वह अपराधो को प्रश्रय देने लगता है ऐसा 1750 ई. के बाद अपराधी वृत्तियों के समूह से मिलकर, इस सीमा तक हुआ है की, ब्रिटिश सरकार को कर्नल स्लीमन जैसे व्यक्ति को ठग उन्मूलन अभियान में लगाना पड़ा। राई नृत्य हिंदुस्तान के इतिहास में तभी से जाना जाने लगा, राई नृत्य के नाम से तभी से अधिकतर लोग हिंदुस्तान में इस लोक नृत्य को जानने लगे, क्योंकी ठगी में अपराधी वृत्तियों की युवतीओं का विशेष योगदान रहा है। समकालीन सामंतों, ज़मींदारों और संपन्न घरानों के

व्यक्तिओं ने इन उर्जावान एवं उत्साही क्षपणस्वीकृति वाली कलात्मक युवतियों को अपनाने का प्रयत्न किया गया। मगर कालांतर में वह एक अभिशाप बन गया। आज राई के कलाकार विशेषकर बेडनीयां (नर्तकियां) जहाँ एक ओर सामाजिक भर्त्सना की शिकार हुईं है वही आधुनिक सन्दर्भों में कला के माध्यम से देह व्यापर के लिए भी अभीशप्त है। प्रसिद्ध राईयां प्रमुख रूप से मृदंगियों के नाम से प्रसिद्ध होते है। हर युग में ऐसे एक-दो मृदंगिया प्रसिद्ध हुए है, इनमे पिछली शताब्दी के नामो को स्मरण किया जा सकता है। मेरी इस कला में रूचि होने का कारण, मैंने इसका अध्यन किया जिसके दौरान मुझे जानकारी मिली की 1960 तक श्री हरसहाय हज़ारी का नाम सागर ओर इसके आस-पास के क्षेत्रों में प्रसिद्ध रहा है, जैसीनगर के पास बरखेडा महंत में रहने वाले हरसहाय अपनी प्रथम पीढ़ी से राई के महान नर्तक के रूप में स्थापित हो चुके थे। जबकि आस–पास के सभी क्षेत्रों व् अपने गाँव में ही इतनी अधिक राई करते थे की, इनकी शादी ब्राह्मण समाज में होना दुर्लभ हो गया था, समाज वालों ने बड़ी मुश्किल से इनकी शादी करा पाई। राई करने वाले लोगों के अनेक प्रवाद फैलते थे और ब्राह्मण समाज यदि इस कला से जुड़ती थी तो पूर्ण ब्राह्मण समाज उसका बहिष्कार करती थी जैसा की हरसहाय जी साथ हुआ, हरसहाय हज़ारी के बहुत कोशिश करने के बाद भी मुश्किल से 4-5 शिष्य ही बन पाए थे, जो ब्राह्मण समाज के नहीं थे, क्यों की मृदंगिया के साथ जुड़ने वाली बेडिया समाज की लड़कियां (नर्तकीयां) के साथ नृत्य करने से समाज के सभी लोग उसका बहिष्कार करते थे, समय के साथ साथ बदलाव भी होते रहे है।

हरसहाय जी ने अपने 3 दशकों के दौरान में 3 पीड़ियों की नर्तकीयों के साथ नृत्य किया है , इन्ही के जैसी परंपरा में श्री पांडे जी (रामसहाय पांडे) ने भी 3 पीड़ियों की नर्तकीयों के साथ नृत्य किया है और वह भी हरसहाय जी के जैसे ब्राह्मण समाज से बहिष्कृत होने के बाद भी लोक नृत्य राई करना नहीं छोड़ा, उसी प्रकार श्री कपूरचंद जी जैन थे। ये हरसहाय हज़ारी के समान्तर ही अपनी नृत्य परंपरा बनाए रखें थे और बाद में आपको भी विशेष महत्व मिला। कपूर चंद जैन का जन्म ग्राम खमरिया, पोस्ट नन्ही देवरी, तहसील देवरी, ज़िला सागर में विक्रम संवत 1975 में श्री फदालीलाल जैन के घर में हुआ था, जो बाद में गैरतगंज में जाकर बस गए थे। इन्होने भी समाज का ध्यान ना रखते हुए लोक नृत्य राई को अपना सब कुछ मानकर इसमें विशेष लगाव रखा, इन्होने मृदंग बजाने में विशेष महारत हासिल की थी। इनकी पत्नी का नाम हरीबाई था, इनके चार पुत्र और दो बेटियां थीं, इनके पुत्रों ने इस लोक कला से बहुत दूर रहकर ज़मींदारी व् दुकानदारी कर अपना जीवन यापन करने लगे, तो इसी प्रकार पांडे जी (रामसहाय पांडे जी) आपके पुत्र भी इस विधा से दूर है केवल आपका एक पुत्र (संतोष पांडे) ही इस कला में पारंगत है, बाकी आपके 3 पुत्र इस विधा को छोड़ अन्य व्यावसायिक कार्य कर रहे है। अगर इसी तरह धीरे धीरे इस कला को करना सभी छोड़ते

गए तो यह कला एक दिन ख़त्म हो जाएगी, इसीलिए इसे जीवित बचाए रखने के लिए हमसब को मिलकर एक ऐसा प्रयास करना होगा जिससे हमारी लोक कला जीवित बची रहे। इसके लिए हमे सभी समाजों को मिलकर अपनी लोक संस्कृति को जीवित बचाए रखने में अपना पूर्ण योगदान प्रदान करना होगा। हमे नए युवाओं को इस विधा से जोड़ने के लिए उन्हें एक बड़े स्तर पर राई नृत्य का नाम से एक प्रशिक्षण संस्थान सरकार के द्वारा स्थापित होना चाहिए। जिससे नए युवा इस कला का प्रशिक्षण ले सकें और इसे सदियों तक जीवित बचाया जा सके।

श्री ललित मोहन जी ने अपने उद्‌बोधन में कहा:

मेरा कहने का तात्पर्य यह है की राई जनमानुष में मनोरंजन की ऐसी सतरंगी सरगम है जिससे नृत्य, संगीत, अभिनय और शौर्य प्रदर्शन की पवन गंगा बहती है। मुझे याद है की सागर जिले में मेरे ख्याल से ऐसी महान शख्ससियतों ने जन्म लिया है जिन्होंने सागर का ही नहीं वरन बुन्देल्खंड का नाम राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्थापित किया है, जैसे की बुंदेलखंड में जन्मे श्री हीरासागर ने अपने बचपन से ही बुन्देली लोक संगीत की साधना की है और इसी के बल पर हिंदी साहित्य से एम.ए, करने के बाद वे आकाशवाणी में संगीत के कार्यक्रम अधिकारी हो गए थे। इन्होने 1950-60 के बाद तक की राई का विशेष अवलोकन किया था और इसे एक कार्यक्रम के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए 70-80 के दशक में लोकनृत्य को स्थापित करने का श्रेय उन्हें जाता है। राई के संबंध में विभिन्न राइयों और बुन्देली लोक संगीत के विचारकों और कला मर्मज्ञों से बात करने में मेरा साक्षात्कार श्री हीरासागर से हुआ तो उन्होंने अपना एक कार्यक्रम ही मुझे राई की जानकारी देने के लिए प्रस्तुत करवा दिया। यह समस्त सामग्री मशहूर मृदंगियों और संगीतज्ञों के विचारों को तो प्रस्तुत करती ही है, उन प्रसिद्ध बेडनियों से किये गए साक्षात्कारों का विवरण भी देती है। जैसा की कहते है:

"इत जमना उत नरबदा, इत चम्बल उत टौंस"

बुंदेलखंड की सीमा निर्धारित करने के लिए महाराजा छत्रसाल की राज्य सीमा दर्शाने वाले प्रसिद्ध दोहे की पंक्ति का अक्सर सहारा लिया जाता है।

यमुना, नर्मदा, चम्बल और टौंस नदियों के मध्य बसा बुंदेलखंड भारत वर्ष की ह्रदयस्थली मध्य प्रदेश का सबसे बड़ा क्षेत्र है, इसका कुछ हिस्सा उत्तर प्रदेश में आता है, मध्य प्रदेश के कुछ ऐसे हिस्से है जिनको राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जाना जाता है। जैसा की खजुराहो के मंदिर, साँची के बौद्ध स्तूप, जबलपुर की संगमरमरी चट्टानें और मदनमहल के खंडहर, विंधाचल और सतपुड़ा की पर्वत श्रृंखलाएं, नर्मदा, बेतवा, धसान नदियों के अमृत जल से

सिंचित गेहू अलसी और चने वाली उर्वरा धरती यह सारे के सारे नाम बुंदेलखंड के साथ जुड़े हुए है। इस धरती पर (पार्श्व में मऊअर बीन लोकवाद्य पर लोकधुन) वीर बुंदेला छत्रसाल, लाला हरदौल, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, दुर्गावती, आल्हा -उदल इन सब ने अपने शौर्य के कीर्तिमान स्थापित किये है। बुंदेलखंड में खजुराहो में पाषणो पर तराशी गई मूर्तियाँ देखने के लिए देश-विदेश से पर्यटक आते है, ,पर उनको क्या मालूम की खजुराहो के मंदिरों में नृत्य-मुद्रा में खड़ी नर्तकी, मृदंग पर थाप देता मृदंगिया और मंजीरे झंकारते दल को तराशने वाले कलाकारों ने प्रेरणा कहाँ से पाई ?

वाचक 2: इन कलाकारों ने प्रेरणा पायी है बुंदेलखंड की शिराओ में रस संचार करने वाले लोक नृत्य राई से. . . . . .राई जिसमे नाच करती हुई बेडनी इतनी द्रुत गति से घुमती है, जैसे फर्श पर फेंका हुआ राई का दाना।

राई, जिसके शौक में राजे-महाराजे, ज़मींदार और अन्य संपन्न परिवार के लोग धन, जमीन, जाती को ताक पर रख कर राई और राई की नर्तकी के लिए दीवाने हो जाते थे और इस बात का एहसास कराती है यह पंक्तियाँ:

हमे प्यारी ढोलकी, तुम्हे प्यारी फाग,
ठाकुर खों प्यारी बेडनी, पलका पे चबारई पान,
गौहारी तों लिख दई बेड़नी खों बालम ने,
सो पलका पे बैठी, चबारई पान

एक वृद्ध के कथन के अनुसार .

यही राई कभी कभी अपने दीवानों के लिए जीवनदायनी भी बन जाती है, जैसा की राई के शौक की बात क्या करना, अंग्रेजी शासन के समय की बात है नन्ही देवरी के रघुवीर सिंह को क़त्ल के अपराध में मौत की सजा सुनाई गयी थी, फांसी देने से पहले जब इन से आखरी इच्छा पूंछी गयी तब ना तो उन्होंने परिवार के सदस्य का मुह देखने की इच्छा ज़ाहिर की और न कुछ खाने पीने की, रघुवीर सिंह बोले-की मेरो तो इच्छा एक ही है अगर इसे पूरा कर दिया जाये तो मेरे ऊपर सबसे बड़ी कृपा होगी, तो उन से कहा गया की आपकी आखरी इच्छा क्या है ? तो रघुबीर सिंह ने कहा की यदि मुझे फंसी से पहले एक रात राई करने की अनुमति प्रदान की जाए और उसके बाद सुबह फांसी दे देना। इनकी इच्छानुसार राई का प्रबंध करा दिया गया, रात हुई और जब राई शुरू हुई तो देखा की जिसने फांसी की सजा सुनाई थी, वह भी राई देखने पहुँच गए थे और राई देखकर इतने खुश हुए की सवेरे रघुवीर सिंह को फांसी की सजा से मुक्त कर दिया गया।

वैसे तो राई वसंत ऋतू से ग्रीष्म ऋतू तक ही विशेष रूप से आयोजित की जाती है मगर होली के अवसर पर और शादी-विवाह के अवसर पर विशेष रूप से लोक नृत्य राई का आयोजन किया जाता था, मगर अब तो राई का प्रचलन धीरे-धीरे ख़त्म होता जा रहा है। पहले तो सभी अवसरों पर राई नृत्य का आयोजन सामान्य बात होती थी।

राई में नाचने वाली बेडनी को छोड़ कर दुसरे कलाकार पेशेवर (धंधे वाले) नहीं होते, यह शुद्ध रूप से लोक जीवन में मनोरंजन का प्रतिक होता है। इसमें छोटे-बड़े, ऊँच-नीच, बूढ़े-बालक, स्त्री-पुरुष सभी एक रस होकर डुबकियाँ लेते है। इसमें किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रखा जाता। राई की रंगस्थली में पहुँचते ही सारे दुःख, संतापों को विराम मिल जाता है।

राई के प्रति इस जन आकर्षण का कारण यही है की एक तो राई बुंदेलखंड की लोक परंपरागत शैली में प्रस्तुत की जाने वाली लोक कला है, फिर इस लोक कला में बुंदेलखंड का लोक जीवन मुखर हो जाता है।

बेडनी के नयनाभिराम नृत्य को देखकर और जनभावनाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले लोक गीतों को सुनकर यहाँ के लोगों के उत्साह सरस और अनंदीवृत्ति को तृप्ति मिलती है।

पहले राई करना एक गौरव की बात मानी जाती थी, दुसरे लोगों और गाँवो के सामने राई कराने वाले व्यक्ति या गाँव को अधिक संपन्न माना जाता था। राई में मृदंग बजाना और बेडनी को नचाना हर किसी के बूते की बात नहीं होती थी, मृदंग वाले ने ज़रा सा भी कनसुरा या लय से अलग ताल बजा दिया तो बेडनी अपने पांव के घुंघरू खोल कर दूर खड़ी हो जाती थी। राई प्रदर्शन की पूरी सफलता इसी पर आश्रित है की मृदंग वादक ठीक-ठीक ताल और लय रखते हुए बेडनी को नाचए। इसके लिए बहुत ज़रूरी स्फूर्ति, लगन, सूझ-भूझ का अनुभव होना चाहिए। मृदंगिया और बेडनी की जोड़ी की तरह ही मृदंग और टिमकी में भी नर-मादा का सम्बन्ध होता है और इन वाद्य यंत्रों के साथ मंजीरों की ध्वनि भी बहुत ज़रूरी होती है जैसे की दुल्हे के साथ बाराती रस बरसाते हुए साथ में चलते है।

राई में लय पहले खेमटा जैसे होती है फिर द्रुत में जाकर कहरवा हो जाती है और अंत में कहरवे के चौगुनी लय हो जाती है, राई में मृदंग पंचम में बोलता है और टिमकी ऊँचे स्वर में बजती है। द्रुत में टिमकी कभी धीमे और कभी जोर से आवाज़ करती बजती है और साथ में मृदंग संगत करता है, जिससे गीत में और नांच में बड़ा आनंद आता है।

राई में सबसे पहले सुमरनी गयी जाती है, तो दुसरे गीतों को बाद में गया जाता है, कभी हास्य तो कभी व्यंग, कभी श्रृंगार तो कभी भक्ति और रस के गीत व् पौराणिक गीत गए जाते है।

धुनों और छंदों के आधार पर राई गीत के अलग-अलग नाम मिलते है जैसे की सुमरनी की फ़ाग, खड़ी फ़ाग, स्वांग, रसिया, ख्याल, हांका की फ़ाग, शकीली फ़ाग, छंदयायु फ़ाग, पुरुषों के द्वारा गयी जाने वाली फ़ागें, ख्याल और स्वांग ही राई में गए जाते है। कहीं-कहीं महिलाओं द्वारा गए जाने वाले गीत भी इसमें शामिल किये जाते है, यह गीत विवाह उत्सव पर अधिकतर राई में गए जाते है, जैसा की बनरा, बनरी, दादरा आदि गीत गए जाते है। राई में होली के अवसर पर होली गीत अधिकतर गाये जाते है। जैसा की हमने पहले ही बताया था की राई में बेडनी अकेली पेशेवर होती है, जो बेडिया जाती की होती है। नट की तरह ही बेडिया जाती भी घुमंतू जातियों में से एक है, परन्तु अब ये स्थायी रूप से बसने लगीं है। इनके पुरुषों द्वारा खेती और महिलाओं द्वारा राई नृत्य किया जाता है, और बचे समय में महिलाएं खेती बड़ी में भी हाँथ बटांती है।

अब प्रश्न यह उठता है की यह राई नृत्य जीवित कैसे रहेगा, जिन लोग-बागो के दिलों में खुशियाँ है वे इसे करेंगे और जिनके दिलों में दाग आ गया है वे इसे भूल जाएंगे।

राई में शारीरिक प्रदर्शन इतना महत्त्व नहीं, रखता जितना की महत्त्व नृत्य कला का होता है। पारिवारिक वातावरण और अनुभव ही इनका गुरु होता है लेकिन अब इस कला में भी आधुनिक युग के चिन्ह भी परिलक्षित होने लगे है, और पैसा ही हाव-भाव, मुख मुद्रा और गीतों की शब्दावली बनने लगी है। जैसा की कहते है की नर्तकी (बेडनी) जब राई नृत्ये करने को सौबत के बीच आती है तो नर्तकी सोने चांदी के क्षेत्रीय आभूषणों से सज कर जब दर्शकों के सामने आती है तो, मेनका, उर्वशी और रम्भा की क़ल्पना साकार हो जाती है। केशों में गुथे स्वर्ण फूल, माथे पर बैंदा और माथे पर गडा बूंदा, आँखों में काजल की पतली कोर, नाक में बड़ी से गोल नथ, मुंह में पान का बीड़ा, होंठो पर लिपस्टिक, कानो में कर्ण फूल सांकर, गले में तिदाना, हमेल, हार, लड़ियाँ, बोंहों में गोटा, कलाईयों में बांके, गजरा, ककना, चुडा, पटेला और चूड़ियाँ, अंगुलिओं में सोने चांदी मुन्दारियां और छल्ले, कमर में चांदी की 9 लर की करधोनी, पाँव में चौरासी (घुंघरू) जिनका वज़न लगभग 3 किलो होता था। पैरों की उंगलियो में बिछिया, कमर में चूड़ीदार पायजामा उसके ऊपर लगभग 32 हाँथ का साटन या सिल्क का लहंगा, मखमल या रेशम की चोली, और रेशम की फूलोंदार रंगीन ओढनी, जो पूरे सर को ढांके रहती है, पहले यही चलन था, अब इसके विपरीत नर्तकीयों के गहने पहनना ख़त्म हो

चुके है, केवल कमर में करधोनी मात्र दिखती है | इसके साथ-साथ नए परफ्यूमों का इस्तेमाल होने लगा है | पहले इतनी सजी-धजी होने के बावजूद भी इनके धन या आभूषणों को कोई भी ठग या डाकू नहीं छीनता था | मगर एक बार ऐसा घटना घटी की दो नर्तकीयां एक गाँव में नृत्य करने के बाद अपने गाँव जा रही थीं, तो रास्ते में चोरों ने उन्हें लूट लिया, तो उनके नामों की जानकारी मिल गयी थी | तो वह जब भी किसी भी गाँव में नाचने को जाती थीं तो उनका नाम लेकर गीत गातीं थीं |

उदहारण के तौर पर (गीत):

चंद्रपुर के पहाड़, लूटी गुलबिया गोटीराम ने

तो फिर चोरों ने इन्हें लूटना बंद कर दिया | यह सजी-धजी जब नाच करती है और यह नृत्य के दौरान लहंगा फैला कर गिरदी लेती है (घूमती है) तो पहरे हुए लहंगा जब घुमता है, तो ऐसा लगता है जैसे पुरहन के पत्ते पर कमल खिल गया हो और आभूषण ऐसे दमकते है जैसे इन पत्तों पर पानी के मोती चमक रहे हो |

इसिलए हम लोक नृत्य राई को अंगिकाभिनय प्रधान नृत्य के रूप में मान सकते है | शास्त्र में भी इस नृत्य का वर्णन मिलता है, इसके 10 गुण देखने को मिलते है

जवः स्थिरत्वं रेवा च भ्रमरी दृष्टिरत्रम: |
मेघाश्रद्धा वचा गतं पात्रपाणाः दशः स्मृताः ||

इस श्लोक के अंतर्गत आने वाले शीघ्रता, स्थिरता, रेवा एवं भ्रमरी राई नृत्य में पायी जाती है | भ्रमरी अर्थात तेज गति से चक्राकार में घूमना राई में विशेष रूप में पाया जाता है | जो चकरी या गिरदी के नाम से जाना जाता है | कभी-कभी नर्तकी गीत के भाव के अनुसार हाँथ हिलाती है, गर्दन को भी घुमाती है, और कटाक्ष करती है |

जैसे की मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड अंचल का लोक नृत्य राई है, उसी प्रकार देखा जाये तो केरला का भरतनाट्यम से इसकी विवेचना की जाये तो, यह मुख्यतः कौशिकी वृत्ति का देसी लास्य नृत्य है | यदि लोक नृत्य राई के ऊपर पूर्णतः कार्य किया जाये तो, यह नृत्य भी क्लासिकल की श्रेणी में आ सकता है|

Project Report
"Safeguarding the Intangible Cultural Heritage and Diverse Cultural Traditions of India"

Submitted to:
Sangeet Natak Akademy, Ravindra Bhawan, Feroz Shah Road, New Delhi

Submitted by: Bundeli Lok Nritya Natya Kala Parishad, Kanera Dev, Sagar

"लोक नृत्य राई के गीत"

बुंदेलखंड यानि बुन्देली भाषी प्रदेश, बुन्देलखण्ड का गौरव एवं परम्पराएं अति प्राचीन है सत्रहवीं शती बुन्देलखण्ड कि आज़ादी कि लड़ाई में बीती | चम्पतराय और उनके पुत्र छत्रसाल इसी लक्ष्य से आजीवन संघर्ष करते रहे | बुंदेला-वंशज-युद्ध 1729 ई. तक चलता रहा और 1731 ई. में छत्रसाल का निधन हो गया | केशवकृत रामचंद्रिका में बेडनी के नृत्य संगीत कि परम्पराओं का संकेत मिलता है, जिससे राई गीत के गायन का साक्ष्य स्पष्ट है | राई नृत्य गीत है जिसे कहीं टोक, कहीं स्वांग आदि विभिन्न नामों से जाना जाता है | राई में गए जाने वाले गीतों का संक्षिप्त रूप में यहाँ पर वर्णन कर रहा हूँ |

बुन्देलखण्ड (मध्य प्रदेश) के राई गीत कोयलिया के गीत है जो कोयल कि कूक के साथ ही शुरू होते है और उसके बंद होने पर ख़त्म हो जाते है | कहने का तात्पर्य यह है कि राई नृत्य में गाए जाने वाले गीतों में इतनी मिठास होती है कि उसे कोयल के समान माना जाता है | इतना ही नहीं कोयल कि कूक कि मिठास और व्यंजना उन गीतों में इतनी समायी है कि उन्हें कोयल के गीत कहना उचित लगता है | वैसे ये गीत लोक नृत्य कि रानी राई से आत्मा कि तरह जुड़े होते है इसीलिए बंसंत ऋतू में या किसी भी ऋतू के कोई उत्सव या आयोजन में अथवा गावों किसी समैया या पर्वों पर जहाँ भी राई नृत्य होता है, राई गीत उसके बोलों कि तरह पहले ही गूंज उठते है | इस तरह इन गीतों के बसेरे सिर्फ गाँवो तक ही सीमित रहे है | नगरों में फैलने के लिए कई प्रयास हुये मगर वह पूर्ण नहीं हो सके, इसीलिए इन गीतों के लोक शास्त्रों को परखना ज़रूरी है, कहीं ऐसा ना हो कि नगरों कि चका-चौंध में अपनों को भूल कर अपनी अपनी अस्मिता खो दें और इसीलिए भी कि आज तक राई नृत्य कि चर्चा हुई है लेकिन राई गीत उपेक्षा के शिकार रहे है | एक पंक्ति के होने से राई गीत आदिम काल का लगता है | इस सन्दर्भ में एक सवाल यह उभरता है कि पहले राई गीत जन्मा या राई नृत्य ? इसका निराकरण करना कठिन है, क्योंकि यह गीत नृत्य के साथ जुडा हुआ है | वैसे राई गीत स्वतंत्र रूप में गाया जाता है पर बहुत कम कभी कभी फागों के फडों में इस गीतों का गायन आज भी होता है | संभव है कि चौकडिया कि फागो का उद्भव 19 वीं शती कि उत्तारार्द्ध के पहले राई गीतों कि फाड़वाजी होती रही है | अबार (जिला छतरपुर) के मेले

में राई गीतों, नृत्यों के शैली से और भी सत्य प्रतीत होता है। इस क्षेत्र के देहातों में भी इन गीतों के रचनाकार मिलते है। जो बात ही बात में राई गीत रच देते है। असल में कुछ कारणों से इन्हें साहित्य में महत्त्व नहीं मिला। इसीलिए इनका वैसा प्रचलन नहीं हो सका जैसा कि चौकड़िया कि फागों का अपना एक अलग तरह का अस्तित्व है। और मुझे तो ऐसा लगता है कि वे राई नृत्य के बोलों कि तरह पहले जन्मे होंगे, तब कहीं बाद में राई नृत्य ने अपना पहला रूप पाया होगा।

राई गीत के सम्बन्ध में कुछ भ्रांतियां भी पैदा होती है, जिन्हें दूर करना ज़रूरी है। एक तो यह कि एक विद्वान सज्जन ने मुझसे कहा कि राई शीर्षक से कोई गीत बुन्देलखण्ड में प्रचलित नहीं है। जिस गीत को राई कहा जा रहा है, उसे टीकमगढ़-ललितपुर जिलो के क्षेत्र में ख्याल नाम से जाना जाता है। और सागर-दमोह-जबलपुर के क्षेत्र में स्वांग। और झाँसी-जालौन क्षेत्र में टौंक कहते है। मेरा निवेदन यह है कि छतरपुर-पन्ना अदि के क्षेत्र में उसे राई कहा जाता है। इस सर्वेक्षण से पता चला है कि गायक, रचनाकार और नर्तकियां सभी एक पंक्ति के गीत को राई ही कहते है। जन प्रचलित है कि "राई गाहो, तो बेडनी नच है" बुन्देलखंडी लोकगीतों में इसे राई कहा जाता है। राई फ़ाग आदि नाम देकर राई के अस्तित्व को अलग से स्वीकारा है। मैं समझता हूँ की इन गीतों को ख्याल, स्वांग और फ़ाग गीत कहने कि अपेक्षा राई गीत कहना अधिक उचित है। कुछ लोग राई को फ़ाग का एक प्रकार मानते है, मैं भी मानता था पर जहाँ पर एक पंक्ति के गीत की बात है उसे फ़ाग से स्वच्छन्द मानना चाहिए। फ़ाग का आर्थ यदि बसंत के गीतों से लगाया जाता है तो, इस व्याप्ति में फ़ाग के अलावा भी गीत गए जाते है। लोक प्रचलित शब्द राई कि भी अपनी सार्थकता है। मैं समझता हूँ की वह संस्कृति के रागी (रागिन) शब्द से व्युत्पन्न है प्राकृतकोश में राई कि व्युत्पत्ति रागिन से कि गयी है। रागी का अर्थ है रागयुक्त अथवा रंजन करने वाला और राई में दोनों अर्थ निहित है बुन्देलखण्ड की राई में दामोदर से राधाकृष्ण का बोध होता है, अतएव राई राधिका से आया जान पड़ता है। संभव है की राधिका के नृत्य (रास) से राइ नृत्य और उसमे गए जाने वाले गीत को भी राई कहा जाने लगा हो। राजस्थान में राई गवरी (गौरी या पार्वती) और नर्तकी को भी राई कहा जाता है। इस आधार पर राई नर्तकी का गीत ठहरता है। जो भी हो राई गीत इन सब विशेषताओं से युक्त है, उसमे राग है और रंजन करने की क्षमता भी है। वह प्रमुख रूप में श्रृंगारिक है और नृत्य के अनुरूप लययुक्त भी है।

कुछ उदहारण:

छतरपुर जिले में गए जाने वाले राई गीत

मर जैहो गंवार, मर जैहो गंवार
झुलनी कौ झुला न पाईहौं।
छिटकी चारउं ओर, छिटकी चारउं ओर
सूरज की बैन जुंदइया।

कोयल कतरै आम, कोयल कतरै आम
सुआ की गत कर दई बाग में।
सावंरिया सरीर, सावंरिया सरीर
सोचन में करिया पर गयें।
अरसी कैसो फूल, अरसी कैसो फूल
सावरे बदन रघुनाथ के।
सपने में दिखायें, सपने में दिखाय
पतरी कवर बूंदाबारी हो।
मोरी मैया अबार, मोरी मैया अबार
गिन गिन के गुंडा नबेर लेव।

छतरपुर के आस पास के क्षेत्र में इन्हें ही राई गीत के नाम से जाना जाता है। दूसरा पुराना राई गीत यह है कि जिसमे ऊपर जैसी पंक्ति के साथ दोहा या दोहे जुड़े हो इसे ही सखयाऊ फ़ाग कहा जाता है। सखयाऊ साखी से बना है, जिसका आशय यह है की साखी या दोहा केंद्र में हो, परन्तु कुछ निम्नलिखित राई में दोहा क़ेंद्रीय अर्थ नहीं देता वरन टेक ही मुख्या अर्थ का भार संभाले हुए है। इस कारण यह सखयाऊ फ़ाग की अपेक्षा राई के नाम से अधिक प्रसिद्ध है।

बज रइ आधी रात, बज रइ आधी रात
बैरिन मुरलिया जा सौत भई।
बन सें तू काटी गई, छेदीतोय लोहार
हरे बांस की बाँसुरी मनो निकरो नईं सार बैरिन।
पोर-पोर सब तन कटे, हटे न औगुन तोर
हरे बांस की बाँसुरी, लै गई चित्त बटोर बैरिन।

उपयुक्त राई की गायिकी बिलुकल वही है जो एक पंक्ति वाली राई की, केवल दोहा बीच में जुड़ गया है। एक तीसरे प्रकार की राई झूलना की राई है, जिसके अर्द्ध पंक्ति में पहली राई की अर्द्ध पंक्ति होती है और दूसरी अर्द्ध पंक्ति लम्बी होती है जैसे:

मधुवन में बीन बजी हर की, कुंवर राधिका के वर की।
पशु-पंछी, सुर नर मुनि मोहें, कौन बात नारी नर की।
जब से सुनी स्त्रवन ब्रज वनिता, मिलवे काज भुजा फरकी।
उलट पलट सिंगार पैर लय, सुरत भूल गयी है घर की।
देव दरस जान जन आपनो, विनय सुनो गंगाधर की॥

राधे सांग सैन की घाली, घायल भये बनमाली ।
राधे राधे नाम रटत है , टेरत ललता आली ।
खान-पान की खबर भूल गए, हालत भई मतवाली ।
संग के सखा किते कह डोलत करत न बोला चाली ।
कर है ठीक बिहारी इनखा, बेई बरसाने वाली ।

ललिता, विषय-वासना छोड़ो, विषयन से मुख मोड़ो ।
इन्द्रिन के यह विषय होत है, इनमे चित्त न जोड़ो ।
नाता लगालेव आतम से, इनको ताँता तोड़ो ।
जे सुख होत तनक छीन भर, के व्रथा न इनसे गोडो ।
है शक्कर को स्वाद बिहारी, जीभ धरे को थोड़ो ।

ललिता तुम तो हो चतुर सियानी, सुनो हमारी बानी ।
यह दुनिया झूठी है तीसे, ईसे क्यों लिपटानी ।
ओलन कैसो रूप समझलो, फिर पानी को पानी ।
है कछु और दिखात और कछु, परत नहीं पहचानी ।
जादू की पचमेर बिहारी, का करहै मेहमानी ।
ललिता तुम तो हो चतुर सियानी, सुनो हमारी बानी ।

भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत एवं परम्पराओं के संरक्षण की योजना के अनुदान के अंतर्गत अनुसंधान के ऊपर श्रेष्ठ विद्वानों के मार्गदर्शन में संस्था ने लोक नृत्य राई के ऊपर कार्य प्रारंभ किया है। यह हमारी प्रथम रिपोर्ट आपके समक्ष प्रस्तुत है, इसमें मैंने अपना पूर्ण प्रयास किया है की इस लोक विधा की तह तक जाने का, मगर यह अपार सागर है इसको खंगालने में अभी बहुत समय लगेगा। इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत जितना भी हो सकेगा, उतनी हमारी संस्था इस कार्य को पूर्ण करने में पूर्ण प्रयास करेगी।

निरंतर कार्य प्रारंभ है . . . . . .

Project Report

"Safeguarding the Intangible Cultural Heritage and Diverse Cultural Traditions of India"

Submitted to:

Sangeet Natak Akademy, Ravindra Bhawan,
Feroz Shah Road, New Delhi

Submitted by: Bundeli Lok Nritya Natya Kala Parishad, Kanera Dev, Sagar

"लोक नृत्य राई की परंपरा"

"शताब्दियों से पुराण, महाभारत, रामायण, लोकगीत, लोकगाथायें तथा देवी देवताओं की कथायें की ग्रामीणों को लोक नृत्य की प्रेरणा देती रही है | दक्षिण के लोकनृत्य शिव नटराज, नारायण तथा शिव के बहुरूपों पर आधारित है | कृष्ण भी महत्पूर्ण रहे है सम्पूर्ण भारत के लोकनृत्य (मणिपुर सहित) राधा-कृष्ण की लीलाओं से संपृक्त है | ओडिशा में जगन्नाथकृष्ण के प्रतिरूप है|"

यह समग्र वैष्णववाद को प्रभावित करते है, गणेश (सिद्धि) और लक्ष्मी (संपत्ति) के देव है, महाराष्ट्र, गुजरात और सौराष्ट्र में विशेष प्रभाव है | समस्त भारत के हृदयस्थल के रूप में बुंदेलखंड है, यहाँ की उत्सवधर्मिता अत्यंतम सघन है | यहाँ पर विदेशी प्रभाव भी अत्यधिक नहीं पड़े है, अतः प्रत्येक त्यौहार में भक्ति भक्ति का प्राचुर्य मिलता है | लोक गीतों में भी इस से छुटकारा नहीं देखा गया | प्रेम के गीत हो या घृणा की भावना, कोई ना कोई पौराणिक चरित्र के ब्याज से अपनी बीतें कर दी जातीं है | लोक नृत्य में तो इसका अतिरेक मिलता है, इसीलिए मनोरंजन के प्रसंग में भी पौराणिक चरित्र के ब्याज से बातें कही सुनी जाती है | राई जैसे लोक नृत्य के बारे में जब बुंदेलखंड के रसिक ग्रामीण से पूछा गया तो सीधी-सादी बोली में उसने राई का सार इस प्रकार व्यक्त कर दिया:

टिमकी मृदंग बजे
घुंघरू के बोल सजे
रेशम की डोरी
चढ़के गोरी रस छलकावे
कर गागर कोरी

कहने का तात्पर्य यह है की राई जन मनोरंजन की ऐसी सतरंगी सरगम है, जिससे नृत्य संगीत अभिनय और शौर्य प्रदर्शन की पवन गंगा बहती है |

लोक शब्द एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में प्रयुक्त किये गए, यह मानव समाज की ओरइशारा करता है, स्पष्ट है की लोकनृत्य एक सर्वसाधारण की कला है, जो लोक में इसीलिए प्रवाहमान है क्योंकि पीढ़ी दर पीढ़ी एक ही परंपरा से जुडी चली आती है | इसमें निहित मत, विचार, श्रद्धा

और शिष्टाचार इतने अपरिवर्तनशील है, की उनकी अंतःर्धारा में बार बार दोहराने पर भी कोई परिवर्तन नहीं होता, उलटे युग में परिस्थितिगत अपेक्षाओं के अनुसार थोडा बदलाव होता है। यह एक प्रकार से परिष्कार ही लाता है। लोक नृत्य में जन समाज की स्थानीय और जातीय विशेषताएं लक्षित होती है। यहाँ यह ध्यान देने की बात है की लोक का संगीत भी इससे जुड़ा होता है, जो समाज की ऐसी सहज आवश्यकता है जिसका सामाजिक उत्सव त्योहारों, रीति-रिवाजों, संस्कारों और मानसिक कार्यों हेतु प्रयोग होता है। यह तथाकथित शिष्ट समाज या वातावरण से बहुत दूर होता है। भले ही इस संगीत से शास्त्रीय संगीत को संवारने में सहायता मिलती है।

लोक नृत्य और लोक संगीत एक दुसरे के अनुपूरक है इनमे से एक आभाव में दूसरे का प्रभावी होना कठिन हो जाता है, अतः यह विश्वास किया जाता है कि लोकनृत्य और लोकसंगीत दोनों का उद्भव और विकास लगभग साथ ही साथ हुआ है। ऐसा माना जाता है की आनंद के उद्वेग में जब शारीरिक अंग संचालनो का आधिक्य होता है तो नृत्य की भंगिमा प्रारंभ हो जाती है। अनेक विद्वानों ने यह माना है की कला आनंद की ही अभिव्यक्ति है, कोई कोई तो पूरी सृष्टि को नृत्यमय मानते है, जो समस्त चेतन और अचेतन इसमें भाग लेते है। लय प्रकृति का स्वभाव है इसे हमारे ऋषियों ने भी बहुत पहले ही मान लिया था, जिसका प्रथम साक्ष्य उन्होंने शिव के ताण्डव नृत्य में बताया है। यह नृत्य उर्जा का प्रतीक है इसीलिए शिव उर्जा के प्रतीक है। जैसे मंडलाकार नृत्य आकाश में चलने वाले नक्षत्र की अनुकृति है, उसी प्रकार लोक नृत्य राई भी पूर्ण मंडलाकार में होता है। वास्तव में राई एक कलात्मक नृत्य है, अनुष्ठानिक भी है परन्तु पौराणिक परिवेश जुड़ा होने पर भी एक लम्बे अंतराल के कारण अपने मूल रूप में नहीं रह पाया। आज राई का मनोरंजनात्मक-श्रृंगारिक रूप ही लोक में रह गया है। लोक नृत्य राई के विभिन्न रूपों को प्रस्तुत करते हुए उसे एक नृत्य नाट्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है। लोक नृत्य राई रातभर होता है, नर्तकी और सौबत को अवकाश देने के लिए, राई के मध्य स्वांग का आयोजन किया जाता है, यह स्वांग व्यंगात्मक तो होते ही है, साथ ही साथ स्थानीयता लिए हुए होते है। नाटक की तुलना में इनमे ना तो कोई मंच होता है ना तो वेश-भूषा पर विशेष ध्यान दिया जाता है और न ही संवाद और भाषा का बंधन होता है। स्वांग गीत गाये भी जाते है, जो राई में प्रारंभिक आलाप (तोरा) की पंक्ति के बाद दोहे या द्विगपंक्तियों के रूप में गए जाते है, फिर सवैया या राई गीत (फ़ागें) प्रस्तुत की जातीं है। राई नृत्य जैसे कलात्मक नृत्य को कलात्मक ही रखने की प्रवृत्ति बनायीं जाती है। मनुष्य ने कृषि के साथ साथ आपदाओं और नैसर्गिक अनुभूतियों का माध्यम नृत्य को बनाया है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में नृत्यों की प्राचीनता का उल्लेख मिलता है, इस सब का आधार लोकाभिरुचि है। नृत्य का कोई इतिहास नहीं मिलता। वैदिक काल के पहले ही लोक नृत्य जीवन के अभिन्न अंग बन चुके थे, वैदिक काल तो भारत के सांस्कृतिक जीवन का आदर्श युग है, इसमें गीत, वाद्य और नृत्य के जैसा अस्तित्व पाया जाता है। यह संसार की अन्य संस्कृतियों में नहीं मिलता। हमारे वेदों में वसंतोत्सव आदि का उल्लेख मिलता है। जैसा की ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में लोक नृत्यों के अनेक उदहारण मिलते है। इसके

मंत्रकरता, नारियों की चंचल गति को देखकर, मंडलाकार नृत्य करने वाली नर्तकियों का बार-बार वर्णन मिलता है। अथर्ववेद में गन्धर्व और अप्सराओं के नृत्य की प्रभूत चर्चा, सामाजिक जीवन और सामूहिक नृत्य में विशेषताओं को प्रदर्शित करती है, नृत्य और नर्तक दोनों का उल्लेख मिलता है। इन नृत्यों में छोटे-बड़े, अमीर-ग़रीब का कोई भेदभाव का कारण नहीं मिलता। उत्सवों में स्त्री-पुरुष का संयुक्त नृत्य में सब लोग तन्मय होकर नाचते थे। पूर्व कालों में भी हमारे लोक नृत्यों की परंपरा विद्यमान थी। लौकिक परम्पराओं की सुरक्षा, पुत्र जन्म, विवाहौत्सव अथवा अभिनन्दन समारोहों में लोक नृत्य का चलन था।

राई मूलतः लोक नृत्य है जो बसंतोत्सव से जुड़ा रहा है और आज भी बसंतोत्सव से लेकर बैशाख पूर्णिमा तक राई की धूम रहती है। रबी की फसल और फ़ाग का प्रमुख नृत्य होने के कारण उसकी प्राचीनता में कोई संदेह नहीं है। चंदेल नरेश मदनबर्मन (1129-65 ई.) के समय मनाये जाने वाले वसंतोत्सव का वर्णन जिन मंण्डन के "कुमारपाल प्रबंध" में मिलता है। रूपकार वसंतराज ने भी चंदेल नरेश परमार्दीदेव और त्रैलोक्यवर्मन के कार्यकाल में वसंतोत्सव का चित्रण किया है। उनके प्रहसन "हास्यचूड़ामणि" का अभिनय तो बसंत ऋतू में हुआ था। स्पष्ट है की यह लोकनृत्य 12वीं सदी के पुर्व से लेकर 12वीं सदी तक प्रचलित था, जो अभी तक प्रचलन में है। लोकनृत्य राई आदिकाल से चंदेलकाल में भी केवल यही लोकनृत्य ही रहा है, परन्तु जैसे ही वीरवर्मन (1245-82 ई.) की मृत्यु हुई चंदेल राज्य के टुकड़े-टुकड़े हो गए, और छोटी-छोटी जागीरों में यह नृत्य मनोरंजन का प्रमुख साधन बन गया। बुंदेलखंड में यह स्थिति लगभग 200 वर्ष तक रही। स्वाभाविक है की सामन्तो और जागीरदारों के मनोविनोद में विशुद्ध कलात्मकता की उतनी ज़रूरत नहीं थी जितनी मसखरी और संवाद की। इस कारण राई लोक नृत्य में लोकनर्तिकियों की संख्या बड़ी और विदूषक एक-दो पुरुष जैसे पत्र भी इसमें सम्मलित होते रहे। राई में अभिनय शामिल हो गया और लोकनृत्य और लोकनाट्य दोनों रूपों में प्रचलित हुआ। इस प्रकार 15 वीं सदी से लगातार लोक नृत्य के साथ साथ लोक नाट्य भी निरंतर गतिशील रहा है। ना तो इस प्रदेश में कोई साम्राज्य स्थापित हुआ और ना राई का तार टूटा। राई नृत्य में नर्तकी का घूँघट डालना और हाँथ में रुमाल लेकर, संकेतात्मक अभिनय करना मध्ययुग की ही देन है।

इसी प्रकार राजस्थान के लोकनाट्य गवरी (गौरी) की नर्तकियों को राई कहा जाता है। यहाँ तक की गवरी का नाम राई भी प्रचलित है। इससे प्रकट है की गवरी भी पहले लोक नृत्य रहा है और कालांतर में लोक नाट्य के रूप में विकसित हुआ। राई लोकनाट्य की अभिनेत्री और नर्तकी बेडनी (बेडिया) जाती की होती है। वस्तुतः बेडिया जाती नृत्य की पेशेवर जाती थी और बेडनी शब्द बेडिया जाती का उद्बोधन करता है। यह लोक नृत्य जहाँ जनता में प्रिय है, वहां राजा के सामन्तों, जागीरदारों, ठाकुरों अदि मध्य युग के उच्च वर्गों में प्रचलन में रहा है। उसका सर्वाधिक उत्कर्ष 19वीं शती में रहा है, उच्च वर्ग के विनोद और विलासिता का साधन बनने से ही वह व्यावसायिक हुआ है और इसीलिए उसका मंचन चाहे जनता के बीच होना हो, चाहे जमींदार की हवेली में। बेडनी को पहले साई (बयाना) दिया जाता है।

मध्य युग में राई का मंच या तो बिल्कुल सादा खुला हुआ होता था, या फिर हवेली के भीतर सजा संवरा। सादे मंच में किसी भी बड़े मैदान के बीच स्वच्छ टुकड़े को रस्सी से घेर दिया जाता था और उस घेरे के भीतर एक तरफ़ गायक और वादक दल खड़े रहते है, जिनके पीछे नगड़िया सेंकने के लिए अलाव या कोंडे में आग सुलगती रहती है। तो बांकी तीन तरफ लोक नृत्य के लिए खाली रहता है। रौशनी के लिए पलीते जलाये जाते है, एक दो पलीते बेडनी के हाव-भाव निरखने के लिए नर्तकीयों के साथ-साथ गतिशील रहते है। राई नृत्य में मृदंग वादक व बेडनी के बीच एक मुकाबला चलता रहता है, जो पूरी रात देखने को मिलता है। उसी के लिए दर्शक पूरी रात यह सोचता रहत्ता है की नर्तकी का नृत्य श्रेष्ठ है या मृदंग वादक का वादन। दोनों की होड़ के साथ-साथ यह नृत्य भोर होते ही समापन की ओर चला जाता है।

मृदंग का उल्लेख भरतमुनि के नाट्य शास्त्र में भी आता है। मृदंग लोक वाद्यों में सर्वाधिक प्राचीन लोक वाद्य है। लोकसंगीत में आज भी मृदंग अपने वैभव एवं प्राचीन पहचान के साथ विद्यमान है। बुंदेलखंड (मध्य प्रदेश) के ग्रामीण क्षेत्रों में मृदंग का प्रयोग लोक नृत्य में किया जाता है। बुंदेलखंड के राई नर्तक मृदंगवादन में अपनी सानी रखते है। प्रारंभिक काल में मृदंग का निर्माण मृदा अर्थात मिट्टी से होता था, किन्तु कालांतर में मृदंग का स्वरुप एक नए रूप में विकसित हुआ और उसका खोल मिट्टी के स्थान पर लकड़ी का खोल बनाया जाने लगा। आज पूरे बुंदेलखंड (मध्य प्रदेश) में चहुँओर मृदंग का खोल लकड़ी से बना ही पाया जाता है। यह खोल आम, बीजा या शीशम की लकड़ी से बनाया जाता है। मृदंग वादकों एवं विशेषज्ञों से ये ज्ञात हुआ है की इन्ही तीनो वृक्षों की लकड़ी ही मृदंग के खोल के लिए सर्वोत्तम टिकाऊ एवं गुणकारी मांनी गयी है। मृदंग के निर्माण की पद्धति ढोलक के समान ही है। अंतर केवल इतना है की ढोलक में धातु के छल्ले सरद में लगाये जाते है जबकि मृदंग की सरद में लकड़ी के आयताकार छोटे ठिम्मे (गुटके) लगाये जाते है। यह गुटके गद सिरे की ओर होते है। तथा मृदंग के आवश्यक सुर-ताल निश्चित करने के लिए इन ठिम्मों को वादकगण तत्कालिक उपलब्ध किसी ठोस वस्तु से ठोक लेते है। मृदंग में भी ताली और गद होते है। किन्तु मृदंग के गद से स्वर निकालने की विशेषता यह है कि इसके गद से आटा का लौंदा चिपकाया जाता है, जिससे गंभीर आवाज़ निकलती है। ताली में तबले जैसी स्याही लगायी जाती है मृदंग का आकार ढोलक से भिन्न होता है। यह गद की और मोटा और ताली की ओर क्रमशः पतला होता जाता है। सरदे लगाने का प्रचलन अलग अलग क्षेत्रों में भिन्न होता है कहीं चमड़े की और कहीं सूत की रस्सी की सरदे लगायीं जातीं है। इसे कमर में बांध कर दोनों हाथों की हथेली और उँगलियों से बजाया जाता है। वादक मृदंग में बहुरंगी झालार से मृदंग को सजाता है। इस झालर में ऊन के फुंदने, चमकी रेशम, जुगजुगी अदि श्रृंगार की सामग्री का उपयोग करते है। सजाने का यह कार्य केवल बुंदेलखंड में अधिक पाया जाता है। यहाँ पर ढोलक में भी ऐसी सुन्दर झालर लगते है। वास्तव में लोक कलाकारों की ही यह सुन्दर सूझ है। इस नृत्य में मंजीरा (झांझ या तारें) अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है।

इन्हें प्रायः सहवाद्य के रूप में ही उपयोग किया जाता है। इनका तीखा स्वर अन्य लोक वाद्यों के मिश्रित स्वरों में भराव का कार्य करता है। गाँवों में रात्रि के सान्नाटे में झांझ (मंजीरा) बजते है तो इनकी आवाज़ मीलों दूर तक सुनाई पड़ती है। मंजीरा पीतल या कांसे की धातु से बनाये जाते है। वास्तव में ये दो वाद्य शुद्ध पीतल या कांसा धातु से नहीं बनाये जाते है बल्कि कांसा, पीतल की मात्रा अधिकाधिक रखकर इन धातुओं में जस्ता, तांबा, कस्कुट अदि की न्यून मात्रा भी मिश्रित की जाती है। मिश्रित धातु के कारण ही इनसे मीठा स्वर निकलता है। धातुओं के मिश्रण, प्रकार, वजन एवं आकर अदि की गुणवत्ता पर ही इन वाद्यों की उत्तर ध्वनि निर्भर रहती है। इनका निर्माण ताम्रकार जाती के लोग और कसेरा जाती के लोग करते है। इनका आकर छोटे-छोटे गोलाकार में होता है, किन्तु इनका सामान्य गोलाकार आकर होता है। लोक नृत्य राई में रमतूला (तुरई), ढपला (चंग), टिमकी का विशेष महत्त्व होता है। लोक नृत्य राई में टिमकी (नगड़िया) को राई नृत्य की मौडी कहा जाता है। यह कुम्हारों द्वारा मिट्टी का कोंढा (घारा) बना कर आग में पकाया जाता है। उसको पूर्ण पकने के बाद बसोर जाती (धानक जाती) के द्वारा उस पर भैंस या पड़े का चमड़ा पका कर चढ़ाया जाता है। और उसे चमड़े के छोटे- छोटे तनों (सरदों) को पूरे घारे पर मकड़ी के जाल के समान बुना जाता है, इसके चमड़े, बुनाई और घारे पर इसके स्वर का निर्धारण होता है। इनका आकर गोलाकार होता है, जिसका व्यास लगभग 12-14 इंच का होता है, जो खेर या शीशम की लकड़ी के पतले डंडो से बजायी जाती है, डंडो की लम्बाई 12-14 इंच तक की होती है। इनकी मोटाई अंगूठे के बराबर होती है। इसके साथ साथ राई लोकनृत्य में अलगोजा का वादन भी होता है, बुंदेलखंड (मध्य प्रदेश) में विभिन्न क्षेत्रों व अंचलों बाँसुरी के अपने अलग अलग नाम होते है, जिनमे कुछ विविधता और विशेषताएं भी है जैसे मंडला-सिवनी में जोड़ा बाँसुरी, अहिरी बाँसुरी, मुरली; जबलपुर में बंसी, बाँसुरी; बस्तर में माडिया बाँसुरी; बेतूल-होशंगाबाद भूगड़ू, पवी या पवई; धार-झाबुआ में पावला, पावली, रोहली, सुकटा- सुकटी, बहली; बघेलखंड में बाँसुरी, बंसी; मालवा निमाड़ में बंसी, बंसरी; बुंदेलखंड में बंसी, बरेदी बाँसुरी, अलगोजा नाम से जाना जाता है। दो समान खड़ी बाँसुरियों को मिला कर एक साथ बजाना ही अलगोजा कहलाता है। बुंदेलखंड के कोनों-कोनों में अलगोजा वादन की परंपरा पायी जाती है। बाँसुरी के समान इस लोकवाद्य से भी गीत के बोल निकाले जाते है। चूँकि दो बाँसुरियाँ एक साथ बजती है अतः बाँसुरी से भिन्नता लिए हुए सुरीले सुर अलगोजा से निकलते है। अधिकतर देखा जाता है कि अलगोजा वादक बाजार में बिकने वाली दो समान बाँसुरियों को खरीदते है तथा उन्हें अलगोजा का स्वरुप स्वयं प्रदान करते है। अपनी रूचि के अनुसार अलगोजों को सुन्दरता पूर्वक फुंदरा आदि से सजाते है। नीचे के हिस्से को एक दुसरे से ढीलदार रस्सी, फुंदना या झालर से बांध देते है। इसका वादन एकल एवं सामूहिक गीतों में किया जाता है।

Project Report

"Safeguarding the Intangible Cultural Heritage and Diverse Cultural Traditions of India"

Submitted to:

Sangeet Natak Akademy, Ravindra Bhawan, Feroz Shah Road, New Delhi

Submitted by: Bundeli Lok Nritya Natya Kala Parishad, Kanera Dev, Sagar

शोध का दुसरे भाग में हमने जिला दतिया के पास रामसागर ग्राम में काम किया क्योंकि दतिया हमारे बुंदेलखंड की नीव मानी जाती है | यहाँ पर शिक्षक द्वारिका प्रसाद कुशवाहा, नरेन्द्र सिंह चौहान ने अपना पूर्ण समय दिया संगोष्ठी के समापन पर नरेन्द्र सिंह चौहान की 3 लड़कियों ने लोक नृत्य राई की एक श्रेष्ठ प्रस्तुति दी जिसे देख कर सभी लोग दंग रह गए जब हमने इनके पिता श्री नरेन्द्र सिंह चौहान से चर्चा की तो उन्होंने बताया की मेरी तीनो लड़कियां रुपाली, निताली, और दीपाली अभी पड़ती है और इनको नृत्य से बहुत लगाव है |

पांडे जी: चौहान साहब आपसे हम और कुछ सवाल करना चाहते है, यदि आप बुरा ना माने तो -

नरेन्द्र सिंह: इसमें बुराई की कोई बात नहीं आप पूंछे :

पांडे जी: चौहान साहब आपकी कितनी लड़कियां है और ये क्या पड़ती है और आप क्या करते है ? और आपने इतना साहस कैंसे जुटा पाये की आप अपनी लड़कियों को लोक नृत्य सिखा कर उनसे राई नृत्य कराते है ?

नरेन्द्र सिंह : पांडे जी सर्व प्रथम हम आपको या बताना चाहते है की कला की जाती विशेष की नहीं होती कला तो माँ सरस्वती की देन है, उसे तो बुरा तो हम लोग ही बनाते है, क्योंकी हमारी नीतियाँ साफ़ नहीं होती | जिस प्रकार बारिश में कभी गन्दा पानी नहीं बरसता, वह तो नीचे आ कर गन्दा हो जाता है | और जो बच जाता है उसे हम और हमारी सोच गन्दा कर देती है, इसमें पानी का क्या दोष यही पानी जब हम भगवान को चढाते है तो गंगा जल बन जाता है और वही

राई नृत्य के संबंध में एक छोटा सा वर्णन

बुंदेलखंड में कुछ किंदवंती प्रचलित है की नृत्य कला के जनक स्वयं ब्रम्हा जी है, उन्होंने चारो वेदों से भिन्न भिन्न सामग्री को एक जगह एकत्रित कर के उसका उपयोग करने के लिए ब्रम्हा जी ने नृत्य कला का सृजन किया और उन्होंने ऋगवेद से पाठ, यजुर्वेद से अभिनय, अथर्ववेद से रस और सामवेद से गान लिया। ब्रम्हा जी से ही यह कला भरत मुनि ने प्राप्त की और भरत मुनि ने ही अप्सराओं और गन्धर्वों के सहयोग से शंकरजी को प्रसन्न करने के लिए इस कला को प्रस्तुत किया तो उस समय इस कला को रस प्रधान मना गया था और आज राई नृत्य को भी रस प्रधान माना जाता है तो इस कला की उत्पति भी ब्रम्हा जी के द्वारा रचित चारों वेदों से ही मानी जानी चाहिए, क्यों की उस समय जब अप्सराओ व गन्धर्वो के द्वारा शिव जी प्रसन्न किया गया तो आज भी राई नृत्य गन्धर्व जाती की कहलाई जाने वाली (जिन्हें बुंदेलखंड में यह नृत्य करने वालो के लिए इन्हें बेडनी, कंजडिया आदि नामो से जानी जाती है) नर्ताकियों के द्वारा आज भी धार्मिक स्थानों पर देवताओ को मानाने के लिए यह नृत्य किया जाता है। राई नृत्य बुंदेलखंड अंचल में लोगों के जन जीवन में यह एक ऐसा नृत्य है की इसका वर्णन करना बहुत कठिन है। आज भी कहीं कहीं राई नृत्य के बिना शादी-व्याह या धार्मिक आदि कई कार्य नहीं होते है, जब गाँवों में यह नृत्य होता है तो लोग अधिक जनसँख्या में देखने को आते है। चाहे ठण्ड हो या फिर गर्मी या फिर बरसात, राई को देखने वालो की कमी नहीं होती, राई करने वालों की कमी होती है, गाँवों की चौपालों पर लोग शाम से ही एकत्रित होने लगते है कलाकारों लोग अच्छे कपडे पहन कर धोती-कुर्ता जैकेट और सर प़र साफा बांध कर आ जाते है और चौपालों के एक कौने में खड़े होकर राई नृत्य का प्रारंभ करते है। इसमें सर्व प्रथम सुमरनी गाकर राई नृत्य शुरू कर देते है, इसमें गायक लोग जो बिना पड़े लिखे होते है उन्हें कई राई गीत कन्ठस्त रहते है। गायक लोग राई में फ़ाग, ख्याल, स्वांग, चौबोला, बारहमासी, बन्ना-बन्नी आदि बहुत से गीत गाते है। यह नृत्य गीतों से सहारे पूरी रात चलता रहता है, फागें, स्वांग गाने के बाद जब नर्तकियां सौबत में आती है तो लोग तालियाँ बजा कर उनका स्वागत करते है और

नर्तकियां अपना पूरा श्रृंगार किये हुए जब सौबत में आती है तो वह मुंह में पान चबाती हुई और अपने ऊपर लगाये हुए खुशबुदार सेंट से महकती हुई धीरे-धीरे ठुमक-ठुमक कर बड़ी अदाओं से साथ सौबत में आती है। इनका श्रृंगार व इनकी आदयें देख लोग इतना फ़िदा हो जाते है की रात भर एक जगह बैठे रहते है और जैसे ही सुबह होने पर अपनी आहें भरते हुए अपने घर चले जाते है। नर्तकी का श्रृंगार दर्शकों को इस तरह मोहित करता है की जब वह रात भर नाच करती है व् अपनी कला प्रस्तुत करती है उसका वर्णन करना कठिन है उनका श्रृंगार इतना सुन्दर होता है की उसे देख कर कोई भी मोहित हो सकता है, उनके श्रृंगार में पूर्ण रूप से प्राचीन गहने पहने हुए रहती है सर पर बैंदा या बिंदिया व शीश फूल, कानो में कर्ण फूल, नाक में नाथ या पुंगरिया, चेहरे पर सुन्दर मेकअप, होंठों पर लाली मुंह में पान, गले में ठुसी-तिदाना, माला, हांथो में चूड़ियाँ गजरा बताने चुरा कमर में नौ लर की करधोनी, लर, पांवो में बड़े बड़े घुँघरू बजनिले पहने हुए रहती है। और जब वह सौबत में आकर सर्व प्रथम धरती माँ के पैर पढ़ती है उसके बाद शारदा के रूप में मृदंग, टिमकी ढपला, रमतूला पैर पढ़ती है और फिर धीरे धीरे अपना नाच आरंभ करती है, नर्तकी अपना नाच मृदंग, टिमकी (नगड़िया), ढपला व तारों (झुला या झीकना) की झूलती हुई लय पर पूरी रात मृदंग वादक के साथ नर्ताकी नंगे पैर नाचती रहती है, नर्तक भी नंगे पैर पूरी रात नर्ताकी के साथ नृत्य करता है। नर्ताकी और नर्तक, बिना कंकर-पत्थर, कांच को देखे बिना पूरी रात पहले धीरे-धीरे और बाद में तेज़ गति से नृत्य करते है। रात में गांवों से रौशनी की कोई व्यवस्था नहीं होती है पूरा राई नृत्य एक मशाल की रौशनी में (पलीता) पूरी रात नृत्य चलता रहता है और अनेको दर्शक रात भर बैठे हुए इस नृत्य का आनंद उठाते है और सुबह होते ही जब राई नृत्य में बधाई गीत बजता है तो दर्शक समझ जाते है की अब राई नृत्य ख़त्म हो गया और सभी अपने अपने घरों के ओर जाने लगते है। दर्शक

Project Report

"Safeguarding the Intangible Cultural Heritage and Diverse Cultural Traditions of India"

Submitted to:

Sangeet Natak Akademy, Ravindra Bhawan, Feroz Shah Road, New Delhi

Submitted by: Bundeli Lok Nritya Natya Kala Parishad, Kanera Dev, Sagar

पूर्व में दी हुई रिपोर्ट के अनुसार हमारा दल नौगाँव जिला छतरपुर के ग्राम निवारिया गाँव में पहुंचा जो अनेक फ़ाग गीतों के रचिता कवियों की जन्म भूमि रही है व हमारे बुंदेलखंड के श्रेष्ठ फ़ाग रचिता श्री ईसूरी कवि भी इसी क्षेत्र के है जिनकी फागें आज भी इस पूरे क्षेत्र में गयी जाती है यही से हम अपने इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत द्वितीय शोध का कार्य प्रारंभ कर रहे है, आज जब हमारा दल जिला छतरपुर के नौगाँव से आगे लगभग 10 किलोमीटर दूर कच्चे में ग्राम निवारिया पंहुचा तो यहाँ पर हमने इस लोक संस्कृति के कई ज्ञाताओं से संपर्क किया व् उन सभी को एक जगह पर आमंत्रित किया इस ग्राम का जनजीवन आज भी अपनी पुरानी परंपरा को लिए हुए व् अपनी पुरानी संस्कृति को जीवित रखे हुए है वैसे तो हम सागर से मऊरानीपुर से आगे झाँसी से पूर्वोत्तर में बसा हमारे आचार्य ईसूरी कवि जी का ग्राम भेढकी है, वहां जाने के लिए निकले थे जो की ईसूरी जी बुंदेलखंड के एक बहुत बड़े कवि रहे है उनके द्वारा रचा हुआ फ़ाग गीत साहित्य बुंदेलखंड के अधिकतर क्षेत्र में गया जाता है हम उन्ही के ग्राम मेढकी जा रहे थे की हमारी मुलाकात छतरपुर में ग्राम निवरिया के एक मृदंग वादक से हो गयी तो हम पहले ग्राम निवरिया पहुँच गए, यहाँ पर हम पहुंचे तो मालूम चला की यह क्षेत्र बुंदेलखंड में घटियाखाले के नाम से जाना जाता है इस ग्राम की आबादी लगभग 800 से 1000 के आस पास होगी हम श्री गोवर्धन जी के साथ में इस ग्राम के सरपंच शंकर सिंह के यहाँ पहुंचे, उनसे हमारी राई के बारे में कुछ चर्चा हुई फिर शाम को करीब 10-25 शौकिया लोक यहाँ पर एकत्रित हुए उनसे हमारी चर्चा हुई फिर हमने उनसे कुछ गाने का अनुरोध किया

तो उन्होंने रात्री में ईसूरी जी की फागें गयीं इसके साथ साथ इन्होने गंगाधर व् खयालीराम जी भी कुछ फागें गीत भी गयीं। फिर इन लोगों से मैंने पूंछा की आप लोग यह फ़ाग गीत कब से गा रहे हो, तो उन्होंने बताया की बचपन से ही हम अपने बुजुर्गों से गाते देखते चले आ रहे है तो हम लोगों ने भी धीरे धीरे फ़ाग गीत गाने लगे और कुछ लोग ढोलक बजने लगे और हम लोग राई नृत्य भी करने लगे तो हम लोगों से पूंछा की आप लोग यह बताइए की इस राई नृत्य की उत्पत्ति कब और कहाँ से हुई तो यहाँ के लोग कुछ खास उत्तर नहीं दे पाए उससे ज्यादा तो जानकारी इससे पहले हम सबमिट कर चुके है फिर फ़ाग गीतों का गायन लगभग 3 घंटे तक चलता रहा फिर हमने इन लोगों से दुसरे दिन एक राई नृत्य करने के लिए कहा तो सब लोग तैयार हो गए मगर उन्होंने मुझसे कहा की नर्ताकियों का खर्च आपको देना पड़ेगा तो इसके लिए हम राज़ी हो गए तो दूसरे दिन देवेन्द्रनगर जिला छतरपुर की 2 नर्ताकियों को बुलवाया गया और दूसरे दिन लोक नृत्य राई लगभग रात के 10 बजे से प्रारंभ हुई और यह सुबह पांच बजे तक चलती रही, यहाँ पर जो देवेन्द्रनगर से नर्ताकियां आयी थी, वह एक शीलाबाई व् दूसरी रेखाबाई थी, इन दोनों नर्ताकियों से हमने कुछ चर्चा की जो निम्नानुसार है :

पांडे जी : आप लोगों का क्या नाम है और आप दोनों जान की उम्र क्या होगी ?

शीला बाई : मेरा नाम शीला बाई है और मेरी उम्र, लगभग 28-29 साल के आसपास होगी और मेरे साथ में यह जो आई है इनका नाम रेखा बाई है यह हमसे 3-4 साल छोटी है इनकी उम्र अभी 25-26 साल की होगी

पांडे जी : मैं आप लोगों से कुछ पूंछना चाहता हूँ, आप लोग बुरा तो नहीं मानेगी

रेखा बाई : नहीं नहीं पांडे जी आप यह कैसी बात करते है

पांडे जी : आप लोग जो यह राई नृत्य करती है यह आपने किस से सीखा और कब से कर रही है और क्यों करती हो

Project Report

"Safeguarding the Intangible Cultural Heritage and Diverse Cultural Traditions of India"

Submitted to:

Sangeet Natak Akademy, Ravindra Bhawan, Feroz Shah Road, New Delhi

Submitted by: Bundeli Lok Nritya Natya Kala Parishad, Kanera Dev, Sagar

शोध का दुसरे भाग में हमने जिला दतिया के पास रामसागर ग्राम में काम किया क्योंकि दतिया हमारे बुंदेलखंड की नीव मानी जाती है | यहाँ पर शिक्षक द्वारिका प्रसाद कुशवाहा, नरेन्द्र सिंह चौहान ने अपना पूर्ण समय दिया संगोष्ठी के समापन पर नरेन्द्र सिंह चौहान की 3 लड़कियों ने लोक नृत्य राई की एक श्रेष्ठ प्रस्तुति दी जिसे देख कर सभी लोग दंग रह गए जब हमने इनके पिता श्री नरेन्द्र सिंह चौहान से चर्चा की तो उन्होंने बताया की मेरी तीनो लड़कियां रुपाली, निताली, और दीपाली अभी पड़ती है और इनको नृत्य से बहुत लगाव है |

पांडे जी: चौहान साहब आपसे हम और कुछ सवाल करना चाहते है, यदि आप बुरा ना माने तो -

नरेन्द्र सिंह: इसमें बुराई की कोई बात नहीं आप पूंछे :

पांडे जी: चौहान साहब आपकी कितनी लड़कियां है और ये क्या पड़ती है और आप क्या करते है ? और आपने इतना साहस कैसे जुटा पाये की आप अपनी लड़कियों को लोक नृत्य सिखा कर उनसे राई नृत्य कराते है ?

नरेन्द्र सिंह : पांडे जी सर्व प्रथम हम आपको या बताना चाहते है की कला की जाती विशेष की नहीं होती कला तो माँ सरस्वती की देन है, उसे तो बुरा तो हम लोग ही बनाते है, क्योंकी हमारी नीतियाँ साफ़ नहीं होती | जिस प्रकार बारिश में कभी गन्दा पानी नहीं बरसता, वह तो नीचे आ कर गन्दा हो जाता है | और जो बच जाता है उसे हम और हमारी सोच गन्दा कर देती है, इसमें पानी का क्या दोष यही पानी जब हम भगवान को चढाते है तो गंगा जल बन जाता है और वही

राई नृत्य के संबंध में एक छोटा सा वर्णन

बुंदेलखंड में कुछ किंदवंती प्रचलित है की नृत्य कला के जनक स्वयं ब्रम्हा जी है, उन्होंने चारो वेदों से भिन्न भिन्न सामग्री को एक जगह एकत्रित कर के उसका उपयोग करने के लिए ब्रम्हा जी ने नृत्य कला का सृजन किया और उन्होंने ऋगवेद से पाठ, यजुर्वेद से अभिनय, अथर्ववेद से रस और सामवेद से गान लिया। ब्रम्हा जी से ही यह कला भरत मुनि ने प्राप्त की और भरत मुनि ने ही अप्सराओं और गन्धर्वों के सहयोग से शंकरजी को प्रसन्न करने के लिए इस कला को प्रस्तुत किया तो उस समय इस कला को रस प्रधान मना गया था और आज राई नृत्य को भी रस प्रधान माना जाता है तो इस कला की उत्पति भी ब्रम्हा जी के द्वारा रचित चारों वेदों से ही मानी जानी चाहिए, क्यों की उस समय जब अप्सराओ व गन्धर्वो के द्वारा शिव जी प्रसन्न किया गया तो आज भी राई नृत्य गन्धर्व जाती की कहलाई जाने वाली (जिन्हें बुंदेलखंड में यह नृत्य करने वालो के लिए इन्हें बेडनी, कंजडिया आदि नामो से जानी जाती है) नर्ताकियों के द्वारा आज भी धार्मिक स्थानों पर देवताओ को मानाने के लिए यह नृत्य किया जाता है। राई नृत्य बुंदेलखंड अंचल में लोगों के जन जीवन में यह एक ऐसा नृत्य है की इसका वर्णन करना बहुत कठिन है। आज भी कहीं कहीं राई नृत्य के बिना शादी-व्याह या धार्मिक आदि कई कार्य नहीं होते है, जब गाँवों में यह नृत्य होता है तो लोग अधिक जनसँख्या में देखने को आते है। चाहे ठण्ड हो या फिर गर्मी या फिर बरसात, राई को देखने वालो की कमी नहीं होती, राई करने वालों की कमी होती है, गाँवों की चौपालों पर लोग शाम से ही एकत्रित होने लगते है कलाकारों लोग अच्छे कपडे पहन कर धोती-कुर्ता जैकेट और सर पर साफा बांध कर आ जाते है और चौपालों के एक कौने में खड़े होकर राई नृत्य का प्रारंभ करते है। इसमें सर्व प्रथम सुमरनी गाकर राई नृत्य शुरू कर देते है, इसमें गायक लोग जो बिना पड़े लिखे होते है उन्हें कई राई गीत कन्ठस्त रहते है। गायक लोग राई में फ़ाग, ख्याल, स्वांग, चौबोला, बारहमासी, बन्ना-बन्नी आदि बहुत से गीत गाते है। यह नृत्य गीतों से सहारे पूरी रात चलता रहता है, फागें, स्वांग गाने के बाद जब नर्तकियां सौबत में आती है तो लोग तालियाँ बजा कर उनका स्वागत करते है और

नर्तकियां अपना पूरा श्रृंगार किये हुए जब सौबत में आती है तो वह मुंह में पान चबाती हुई और अपने ऊपर लगाये हुए खुशबुदार सेंट से महकती हुई धीरे-धीरे ठुमक-ठुमक कर बड़ी अदाओं से साथ सौबत में आती है। इनका श्रृंगार व इनकी आदयें देख लोग इतना फ़िदा हो जाते है की रात भर एक जगह बैठे रहते है और जैसे ही सुबह होने पर अपनी आहें भरते हुए अपने घर चले जाते है। नर्तकी का श्रृंगार दर्शकों को इस तरह मोहित करता है की जब वह रात भर नाच करती है व् अपनी कला प्रस्तुत करती है उसका वर्णन करना कठिन है उनका श्रृंगार इतना सुन्दर होता है की उसे देख कर कोई भी मोहित हो सकता है, उनके श्रृंगार में पूर्ण रूप से प्राचीन गहने पहने हुए रहती है सर पर बैंदा या बिंदिया व शीश फूल, कानो में कर्ण फूल, नाक में नाथ या पुंगरिया, चेहरे पर सुन्दर मेकअप, होंठों पर लाली मुंह में पान, गले में ठुसी-तिदाना, माला, हांथो में चूड़ियाँ गजरा बताने चुरा कमर में नौ लर की करधोनी, लर, पांवो में बड़े बड़े घुँघरू बजनिले पहने हुए रहती है। और जब वह सौबत में आकर सर्व प्रथम धरती माँ के पैर पढ़ती है उसके बाद शारदा के रूप में मृदंग, टिमकी ढपला, रमतूला पैर पढ़ती है और फिर धीरे धीरे अपना नाच आरंभ करती है, नर्तकी अपना नाच मृदंग, टिमकी (नगड़िया), ढपला व तारों (झुला या झीकना) की झूलती हुई लय पर पूरी रात मृदंग वादक के साथ नर्ताकी नंगे पैर नाचती रहती है, नर्तक भी नंगे पैर पूरी रात नर्ताकी के साथ नृत्य करता है। नर्ताकी और नर्तक, बिना कंकर-पत्थर, कांच को देखे बिना पूरी रात पहले धीरे-धीरे और बाद में तेज़ गति से नृत्य करते है। रात में गांवों से रौशनी की कोई व्यवस्था नहीं होती है पूंरा राई नृत्य एक मशाल की रौशनी में (पलीता) पूरी रात नृत्य चलता रहता है और अनेको दर्शक रात भर बैठे हुए इस नृत्य का आनंद उठाते है और सुबह होते ही जब राई नृत्य में बधाई गीत बजता है तो दर्शक समझ जाते है की अब राई नृत्य ख़त्म हो गया और सभी अपने अपने घरों के ओर जाने लगते है। दर्शक

Project Report

"Safeguarding the Intangible Cultural Heritage and Diverse Cultural Traditions of India"

Submitted to:

Sangeet Natak Akademy, Ravindra Bhawan, Feroz Shah Road, New Delhi

Submitted by: Bundeli Lok Nritya Natya Kala Parishad, Kanera Dev, Sagar

पूर्व में दी हुई रिपोर्ट के अनुसार हमारा दल नौगाँव जिला छतरपुर के ग्राम निवारिया गाँव में पहुंचा जो अनेक फ़ाग गीतों के रचिता कवियों की जन्म भूमि रही है व हमारे बुंदेलखंड के श्रेष्ठ फ़ाग रचिता श्री ईसूरी कवि भी इसी क्षेत्र के है जिनकी फागें आज भी इस पूरे क्षेत्र में गयी जाती है यही से हम अपने इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत द्वितीय शोध का कार्य प्रारंभ कर रहे है, आज जब हमारा दल जिला छतरपुर के नौगाँव से आगे लगभग 10 किलोमीटर दूर कच्चे में ग्राम निवारिया पंहुचा तो यहाँ पर हमने इस लोक संस्कृति के कई ज्ञाताओं से संपर्क किया व् उन सभी को एक जगह पर आमंत्रित किया इस ग्राम का जनजीवन आज भी अपनी पुरानी परंपरा को लिए हुए व् अपनी पुरानी संस्कृति को जीवित रखे हुए है वैसे तो हम सागर से मऊरानीपुर से आगे झाँसी से पूर्वोत्तर में बसा हमारे आचार्य ईसूरी कवि जी का ग्राम मेढकी है, वहां जाने के लिए निकले थे जो की ईसूरी जी बुंदेलखंड के एक बहुत बड़े कवि रहे है उनके द्वारा रचा हुआ फ़ाग गीत साहित्य बुंदेलखंड के अधिकतर क्षेत्र में गया जाता है हम उन्ही के ग्राम मेढकी जा रहे थे की हमारी मुलाकात छतरपुर में ग्राम निवरिया के एक मृदंग वादक से हो गयी तो हम पहले ग्राम निवरिया पहुँच गए, यहाँ पर हम पहुंचे तो मालूम चला की यह क्षेत्र बुंदेलखंड में घटियाखाले के नाम से जाना जाता है इस ग्राम की आबादी लगभग 800 से 1000 के आस पास होगी हम श्री गोवर्धन जी के साथ में इस ग्राम के सरपंच शंकर सिंह के यहाँ पहुंचे, उनसे हमारी राई के बारे में कुछ चर्चा हुई फिर शाम को करीब 10-25 शौकिया लोक यहाँ पर एकत्रित हुए उनसे हमारी चर्चा हुई फिर हमने उनसे कुछ गाने का अनुरोध किया

तो उन्होंने रात्री में ईसूरी जी की फागें गयीं इसके साथ साथ इन्होने गंगाधर व् खयालीराम जी भी कुछ फागें गीत भी गयीं | फिर इन लोगों से मैंने पूंछा की आप लोग यह फ़ाग गीत कब से गा रहे हो, तो उन्होंने बताया की बचपन से ही हम अपने बुजुर्गों से गाते देखते चले आ रहे है तो हम लोगों ने भी धीरे धीरे फ़ाग गीत गाने लगे और कुछ लोग ढोलक बजने लगे और हम लोग राई नृत्य भी करने लगे तो हम लोगों से पूंछा की आप लोग यह बताइए की इस राई नृत्य की उत्पत्ति कब और कहाँ से हुई तो यहाँ के लोग कुछ खास उत्तर नहीं दे पाए उससे ज्यादा तो जानकारी इससे पहले हम सबमिट कर चुके है फिर फ़ाग गीतों का गायन लगभग 3 घंटे तक चलता रहा फिर हमने इन लोगों से दुसरे दिन एक राई नृत्य करने के लिए कहा तो सब लोग तैयार हो गए मगर उन्होंने मुझसे कहा की नर्ताकियों का खर्च आपको देना पड़ेगा तो इसके लिए हम राज़ी हो गए तो दूसरे दिन देवेन्द्रनगर जिला छतरपुर की 2 नर्ताकियों को बुलवाया गया और दूसरे दिन लोक नृत्य राई लगभग रात के 10 बजे से प्रारंभ हुई और यह सुबह पांच बजे तक चलती रही, यहाँ पर जो देवेन्द्रनगर से नर्ताकियां आयी थी, वह एक शीलाबाई व् दूसरी रेखाबाई थी, इन दोनों नर्ताकियों से हमने कुछ चर्चा की जो निम्नानुसार है :

पांडे जी : आप लोगों का क्या नाम है और आप दोनों जान की उम्र क्या होगी ?

शीला बाई : मेरा नाम शीला बाई है और मेरी उम्र लगभग 28-29 साल के आसपास होगी और मेरे साथ में यह जो आई है इनका नाम रेखा बाई है यह हमसे 3-4 साल छोटी है इनकी उम्र अभी 25-26 साल की होगी

पांडे जी : मैं आप लोगों से कुछ पूंछना चाहता हूँ, आप लोग बुरा तो नहीं मानेगी

रेखा बाई : नहीं नहीं पांडे जी आप यह कैसी बात करते है

पांडे जी : आप लोग जो यह राई नृत्य करती है यह आपने किस से सीखा और कब से कर रही है और क्यों करती हो

Detailled Project Proposal

शीर्षक Title of the work : **बुन्देलखण्ड का विलुप्त प्राय नृत्य "राई"**

भूमिका Introduction :

राई–नृत्य की परम्परा बहुत प्राचीन है। राईनृत्य के केन्द्र में नर्तकी स्त्री होती है, जिसे बेड़नी कहा जाता है। श्री निरगुणे के अनुसार राई रबी की फसल कटनी और किसान संस्कृति से संबंध रखती है। उसे प्रादुर्भाव के भी यही दो मूल कारक हैं। श्री माधव मनोज शुक्ल के अनुसार राई–नृत्य कब से प्रचलित हुआ, यह खोज पाना मुश्किल है। वैसे तो बुन्देली के प्रथम कवि जगनिक के लोककाव्य आल्हाखण्ड (12वीं शती) और परमाल रासो के नाम से प्रकाशित अज्ञात कवि के रासो ग्रंथ में आल्हा–ऊदल के जन्मोत्सव वर्णन में लोकनृत्य का उल्लेख है, किन्तु राई का उल्लेख नहीं मिलता। छिताई चरित (15वीं शती) में नाद मृदंग कला परबीना, नाचहिं चतुर प्रेम रस लीना।

जायसीकृत पद्मावत (16वीं शती) में – जानी गति बेड़िन दिखराई, बांह डुलाय जीऊ लेई जाई और केशव कृत रामचन्द्रिका (17वीं शती) में काहू कहूं लोलिन बेड़नी गीत गाये से राई नृत्य गीत के प्रसार का आभास होता है।

प्रो. बलभद्र तिवारी के अनुसार – राई का अर्थ अनेक प्रकार से हुआ है। एक अर्थ राई के दाने से तुलना की गई जिस तरह गोल राई का दाना स्थिर नही रहता उसी प्रकार नर्तकी नृत्य में स्थिर नहीं रह पाती। दूसरे अर्थ में राई का अर्थ राजा प्रभु संप्रभु होता है। अनेक भक्त कवियों ने रघुराई (रामराजा), प्रभुराई, कैसोराई (केशवराई), जदुराई (यादव राई), शिवराई (शिव), खंगराई (गरूड़) वनराई (सिंह) का प्रयोग राजा या प्रभु के रूप में किया है। इससे यह सिद्ध होता है कि राई किसी महान, अंतिम और छा जाने वाली शक्ति है।

लोक नृत्यों में राई ऐसा नृत्य है जो सब पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाता है। राई की उत्पत्ति रागी से भी की जाती है जिसका अर्थ होता है कि नृत्य में ऐसा आकर्षण है कि सभी उसके अनुरागी हो जाते हैं। राई गीत एक खास राग में गाये

जाते है। इसके अंतर्गत टोरा, ख्याल और स्वांग तथा फाग गाई जाती हैं। विशिष्ट अंग संचालन के साथ राई नृत्य की संज्ञा दी जाती है।

राई की व्युत्पत्ति रास से भी की जाती है इस संबंध में राई दामोदर नृत्य राधा–कृष्ण की लीलाओं के प्रसंग उठाये जाते हैं। राई आनुष्ठानिक परख तथा श्रृंगारिक होती है। राधा–कृष्ण, राम, शिव के प्रसंगों के आधार पर नृत्य किया जाता है। अधिक नृत्यगीतों के विषयों में शक्ति *"तुम दुरगा चलीं आवरे, पतियां भेजीं राम ने"* शिव *"भोला रे तोरी मूरत विसाल, मोरे अचरवा पै लिख दईयो हॉ"* केन्द्र में रहते हैं, इन्हीं के माध्यम से विभिन्न प्रकार की लीला विलास किये जाते हैं, इसमें परमात्मा के राई होने का प्रत्यक्ष बोध कराया जाता है। नृत्य इस प्रकार शक्तियों के द्वन्द का प्रदर्शन होता है।

राई नृत्य गीतों में श्रृंगारिक हास्य परख, धार्मिक, पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक गीतों की बानगी से राई में जिन घटकों की आवश्यकता होती है, वह टोरा, फाग, ख्याल, स्वांग, चौकड़िया, नारदी की वर्णात्मक रागों का समयकाल के हिसाब से गाया जाता है।

राई के ऐतिहासिक पक्ष पर दृष्टि डालने से विदित होता है कि 1842 के एक जनविद्रोह में राईनृत्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। इसकी शुरूआत नारहट के जागीरदार मधुकरशाह बुन्देला के राज दरबार में एक घटना घटी थी। मधुकर शाह के दरबार में एक बेड़नी का नृत्य चल रहा था, उसी समय अंग्रेज सैनिकों ने घेरा डालर बेड़नी का बलात् अपहरण कर लिया। इस घटना से क्रोधित होकर जब मधुकरशाह ने अंग्रेज अधिकारी को पत्र लिखा, तो उनका जबाव था कि अब से बेड़नी सिर्फ हमारे सामने ही नाचेगी अगर मधुकरशाह को शौक हो तो वे अपनी रानियों को नचवायें। इस अपमानजनिक पत्र के मिलने से बुन्देला मधुकर शाह कुपित हो गये एवं विद्रोही हो गये। नारहट में उस समय लोधी, ठाकुर, मालगुजार संगठित हुए और जन विद्रोह की लपटें उठीं। फिर मालथौन, खिमलासा, खुरई पर कब्जा किया गया। 1857 के पहले की इस चिनगारी ने राईनृत्य की इस पहली समिधा का योगदान था। राई नृत्य के संबंध में एक बड़ी महत्वपूर्ण घटना घटित हुई थी। 1954 में भारत के प्रधानमंत्री पं.

जवाहर लाल नेहरू के सागर आगमन पर प्रकाशित जवाहर अभिनंदन ग्रंथ में राई मृदंगवादक श्री रघुवीर चौधरी का उल्लेख आता है।

श्री रघुवीर चौधरी को ब्रिटिशकाल में किसी अपराध के कारण फांसी की सजा सुनाई गई थी। फांसी से पूर्व उनकी अंतिम इच्छा पूछी गई तब उन्होंने कहा कि उनकी इच्छा बेड़नी के साथ राईनृत्य करने की है। श्री चौधरी की इच्छा स्वीकार कर ली गई। राई का आयोजन बेड़नी को बुलाकर जेल परिसर में हुआ। उनके वादन–नर्तन से जेलर की पत्नी प्रभावित होकर रघुवीर चौधरी को लगने वाली फांसी की सजा माफ करने की कोशिश की गई। अंत में उसकी फांसी की सजा से उन्हें मुक्त कर दिया गया। ऐसा चुम्बकीय जादू होता है, राई नृत्य का।

किवदंती :–

ग्रामण किवदन्ती है कि "एक बेड़नी अपनी नृत्यकला में इतनी पारांगत थी कि वह सूत (धागे) पर नृत्यकला का प्रदर्शन करती थी एवं तांत्रिक बल से धारदार हथियारों को बांध लेती थी। उसकी कला की ख्याति पूरे बुन्देलखण्ड में व्याप्त थी। नरवरगढ़ के राजा ने उक्त बेड़नी की नृत्यकला के लिये आमंत्रित किया। बेड़नी ने शर्त रखी कि अगर वह खरी उतरी तो आपको आधा राज्य देना पड़ेगा। नरवर के राजा तैयार हो गये। नरवरगढ़ के पहाड़ी स्थित किले पर धागा बांधा गया। ऐस कहते हैं कि कच्चे सूत की अंतिम छोर पर पहुंच रही थी तभी मोची ने अपनी धारदार रांपी से सूत को काट दिया क्योंकि नर्तकी रांपी को बांध नहीं पाई थी। अधिक ऊंचाई से गिरकर उसकी मृत्यु हो गई। उक्त दोहा नर्तकी की घटना का साक्षी है :–

नरवर चढ़े ने बेड़नी, ऐरच पके ने ईंट।
गुदनौटा भींजें नहीं, बूंदी टिके ने छींट।।

इस अंचल में राईनृत्य को सामान्य जन से लेकर मालगुजारों, सामंतों, जागीरदारों और प्रतिष्ठित परिवारों द्वारा जगह दी जाने लगी थी। मनोरंजन के साधन के रूप में इस नृत्य की लोकप्रियता बढ़ने लगी। कालान्तर में सैनिकों के मनोरंजन हेतु सेना के पड़ावों में राईनृत्य होने लगा। कुछ विद्वान ऐसा मानते हैं कि सैनिकों के

पड़ाव स्थल में राई का आयोजन अर्थात राहियों के मनोरंजन का नृत्य 'राही' जो राही से राई बन गया रहा होगा।

बुन्देलखण्ड में कई स्थलों पर राई को राही कहा जाता है। धीरे–धीरे राई का विस्तार होने लगा और क्षेत्र में शादी–विवाह, दस्टोन, जन्म आदि पर राई का आयोजन किया जाने लगा। अब वह प्रतिष्ठा का नृत्य बनता जा रहा था। बुन्देलखण्ड के लोक जीवन में राई की बढ़ती लोकप्रियता से बेड़िया परिवारों के गांव भी बसने लग गये। पहले पहल इस अंचल में मुगरयाऊ (पथरिया) में ही कुछ बेड़िया परिवार आकर एक मालगुजार द्वारा बसाये गये थे। कालान्तर में पथरिया से हबला, लिधौरा, चौकी, फतहपुर, बिजावर, छतरपुर, गंज, देवेन्द्रनगर, पन्ना, बड़ागांव, गुना आदि ग्रामों में बेड़िया परिवार बसते चले गये। गांव से अलग क्षेत्रों में इनकी बस्तियां हुआ करती थीं। सागर और दमोह, छतरपुर जिले राई के लिए बेड़िया समाजों के बसाहट होने से प्रसिद्ध होते गये। पथरिया ग्राम तो बेड़नी पथरिया के नाम से आज भी जानी जाती है। इस तरह से बुन्देलखण्ड की राई अपने पूरे रंग और रूप में विकसित होती गई। करीला में तो प्रत्येक रंगपंचमी को राई के नाम पर एक विशाल मेले का आयोजन होने लगा है। यहां पूरे प्रदेश से बेड़नियां इस दिन आतीं हैं और अपना नृत्य करतीं हैं।

समाज का एक वर्ग ऐसा भी था जो राईनृत्य को पसंद नहीं करता था। ऐसे वर्ग ने राई के विषय में अपने विचार कुछ इस तरह से लिखे थे –

पूरब पाप के कारन से,
भगवंत कथा न रूचे जिनको।

तिन एकहि नार बुलाय लयी,
नचवावत हैं दिन रातन को।

मिरदंग कहै धिक है, धिक है,
मंजीर कहे किनके–किनको।

जब हाथ उठा एक नार कहे,
इनको–इनको–इनको–इनको।।

उत्पत्ति :

राई नृत्य की नर्तकी बेड़नी बेड़िया समाज की स्त्री होती है। इस समाज की उत्पत्ति के पूर्व हमें वेश्याओं के क्रमिक विकास पर ध्यान देना आवश्यक होगा। हमें अपने वेद–पुराण, रामायण, महाभारत के अध्ययन करने पर वेश्याओं की उत्पत्ति का आभास होता है। महाभारत कालीन वेश्याओं का वर्गीकरण कुछ इस तरह से था –

- राजवेश्या
- नगर वेश्या
- गुप्त वेश्या
- देव वेश्या एवं
- ब्रह्म वेश्या।

पुराणों में अप्सराओं यथा मेनका, रंभा, उर्वशी आदि के नृत्यों एवं कृत्यों पर विस्तार से वर्णन हुआ है। इन अप्सराओं का काम नृत्य कर मनोरंजन प्रदान ही नहीं अपितु ये अपने रूपजाल में फंसाकर किसी को भी पथभ्रष्ट करने का काम भी किया करतीं थीं। वेश्याओं का प्रयोग शत्रुओं को परास्त करने हेतु होता था, जिनमें विष कन्याओं का या वेश्याओं का पर्याप्त वर्णन किया गया है। चाणक्य ने वेश्याओं को छति पहुंचाने पर दंड देने तथा वेश्याओं की दरें निर्धारित करने संबंधी नियम बनाये थे। वेश्याओं को साधारण बोलचाल में कंजरी, गणिका आदि नामों से भले ही संबोधित किया जा रहा है अथवा उन्हें नीची नजरों से देखा जा रहा हो किन्तु प्राचीनकाल में उन्हें नगरबधुओं और जनपद कल्याणी होने का गौरव प्राप्त था। उनके प्रासादों में अमीर–उमराव ही नहीं सम्राट तक पधारते थे तथा दरबार में उनका सम्मान भी होता था।

आम्रपाली, चित्रलेखा, मदनमाला, पिंगला, वासवदत्ता, गुणवती, सहगा और रुपाणिका आदि कुछ इतिहास प्रसिद्ध वेश्यायें हुई हैं, जिनके कारण कभी भीषण युद्ध हुए तो कभी तलवारें म्यान में ही समा गई। वेश्याओं के जीवन पर अश्वघोष, कालीदास, मानहर्ष तथा भवभूति ने ही नहीं वरन् रवीन्द्रनाथ टैगोर, मुंशी प्रेमचंद, आचार्य चतुरसेन, भगवती वर्मा, अमृतलाल नागर, यशपाल, सहादत हसन, इस्मत चुगताई आदि ने इन पर कलम उठाई थी।